आखर हिंदी पत्रिका; e-ISSN-2583-0597 खंड 4/अंक 1/मार्च 2024
Received: 21/03/2024; Published: 24/03/2024

गुलज़ार की नज्में

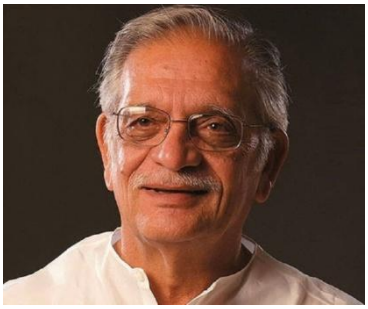

गुलज़ार के नाम से कौन नावाक़िफ़ होगा। लोगों ने उनकी बनाई फ़िल्में देखीं, उनके संवाद सुने और उनके लिखे गीतों को भी भरपूर प्यार दिया। इसके इतर गुलज़ार साहब ने कविता, नज़्में और ग़ज़लें भी लिखी हैं। आइए पढ़ते हैं उनकी लिखी कुछ खास कविताएँ....

यार जुलाहे

मुझको भी तरकीब सिखा कोई यार जुलाहे
अक्सर तुझको देखा है कि ताना बुनते
जब कोई तागा टूट गया या ख़तम हुआ
फिर से बाँध के
और सिरा कोई जोड़ के उसमें
आगे बुनने लगते हो
तेरे इस ताने में लेकिन
इक भी गाँठ गिरह बुनतर की
देख नहीं सकता है कोई
मैंने तो इक बार बुना था एक ही रिश्ता
लेकिन उसकी सारी गिरहें
साफ़ नज़र आती हैं मेरे यार जुलाहे

.....

किताबें

किताबें झाँकती हैं बंद आलमारी के शीशों से,
बड़ी हसरत से तकती हैं.
महीनों अब मुलाकातें नहीं होतीं,
जो शामें इन की सोहबत में कटा करती थीं.
अब अक्सर .....
गुज़र जाती हैं 'कम्प्यूटर' के पदों पर.
बड़ी बेचैन रहती हैं किताबें ....
इन्हें अब नींद में चलने की आदत हो गई है
बड़ी हसरत से तकती हैं,
जो क़दरें वो सुनाती थीं,
कि जिनके 'सेल' कभी मरते नहीं थे,
वो क़दरें अब नज़र आतीं नहीं घर में,
जो रिश्ते वो सुनाती थीं.
वह सारे उधड़े-उधड़े हैं,
कोई सफ़ा पलटता हूँ तो इक सिसकी निकलती है,
कई लफ़्ज़ों के मानी गिर पड़े हैं.
बिना पत्तों के सूखे ठूँठ लगते हैं वो सब अल्फ़ाज़,
जिन पर अब कोई मानी नहीं उगते,
बहुत-सी इस्तलाहें हैं,
जो मिट्टी के सकोरों की तरह बिखरी पड़ी हैं,
गिलासों ने उन्हें मतरूक कर डाला.
ज़ुबान पर ज़ायका आता था जो सफ्हे पलटने का,
अब ऊँगली 'क्लिक' करने से बस इक,
झपकी गुज़रती है,
बहुत कुछ तह-ब-तह खुलता चला जाता है परदे पर,
किताबों से जो ज़ाती राब्ता था, कट गया है.
कभी सीने पे रख के लेट जाते थे,
कभी गोदी में लेते थे,
कभी घुटनों को अपने रिहल की सूरत बना कर.
नीम-सजदे में पढ़ा करते थे, छूते थे जबीं से,
वो सारा इल्म तो मिलता रहेगा आइन्दा भी.
मगर वो जो किताबों में मिला करते थे सूखे फूल,

और महके हुए रुक्के,
किताबें माँगने, गिरने, उठाने के बहाने रिश्ते बनते थे,
उनका क्या होगा ?
वो शायद अब नहीं होंगे !

थोड़ी देर ज़रा-सा और वहीं रुकतीं तो

सूरज झांक के देख रहा था खिड़की से
एक किरण झुमके पर आकर बैठी थी,
और रुख़सार को चूमने वाली थी कि
तुम मुंह मोड़कर चल दीं और बेचारी किरण
फ़र्श पर गिरके चूर हुईं
थोड़ी देर, ज़रा सा और वहीं रूकतीं तो...
.....

कैसी ये मोहर लगा दी तूने

शीशे के पार से चिपका तेरा चेहरा
मैंने चूमा तो मेरे चेहरे पे छाप उतर आयी है उसकी,
जैसे कि मोहर लगा दी तूने...
तेरा चेहरा ही लिये घूमता हूँ, शहर में तबसे
लोग मेरा नहीं, एहवाल तेरा पूछते हैं, मुझ से !!
....

इश्क़ में 'रेफ़री' नहीं होता

इश्क़ में 'रेफ़री' नहीं होता
'फ़ाउल' होते हैं बेशुमार मगर
'पेनल्टी कॉर्नर' नहीं मिलता!
दोनों टीमें जुनूँ में दौड़ती, दौड़ाए रहती हैं
छीना-झपटी भी, धौल-धप्पा भी
बात बात पे 'फ़्री किक' भी मार लेते हैं
और दोनों ही 'गोल' करते हैं!
इश्क़ में जो भी हो वो जाईज़ है

इश्क़ में 'रेफ़री' नहीं होता!

.....

मौत तू एक कविता है.

मुझसे एक कविता का वादा है मिलेगी मुझको,
डूबती नब्ज़ों में जब दर्द को नींद आने लगे
ज़र्द सा चेहरा लिये जब चांद उफक तक पहुँचे
दिन अभी पानी में हो, रात किनारे के करीब
ना अंधेरा ना उजाला हो, ना अभी रात ना दिन
जिस्म जब ख़त्म हो और रूह को जब साँस आए
मुझसे एक कविता का वादा है मिलेगी मुझको।

****